आइए सुनिए किस्सा, एक नए ढंग की परीक्षा का। चाहे अनचाहे परीक्षा शिक्षा व्यवस्था का एक आधार-स्तंभ बन ही जाती है। इस विषय पर भी शिक्षा के अन्य पहलुओं की तरह असंख्य मत हैं। हम यहां पर खुली किताब की परीक्षा के एक अनुभव का हिस्सा दे रहे हैं।

नई किताबें, नई परीक्षा

सामाजिक अध्ययन विषय कक्षा छह, सात एवं आठ में पढ़ाया जाता है। यही वह विषय है जिसके बारे में यह बात बहुत प्रचलित है -

इतिहास, भूगोल बड़े बेवफा,
रात को रटे और सुबह तक सफा।

इस बदनाम विषय को रटन्तपन की मजबूरी से छुटकारा दिलाने की कोशिश हमने की। इस प्रयास में बहुत-सी बातें भी हमने बदलीं। इसके लिए सबसे पहले तो जानकारी को रटने की बजाए समझने पर ज़ोर देने वाली पाठ्यपुस्तकें नए सिरे से तैयार कीं। ये

जब यह परीक्षा पद्धति शुरू हुई तो डर था कि लोग स्वीकार करेंगे या नहीं, लेकिन फिर लगा कि विषय को रटने की मजबूरी से छुटकारा दिलाना है तो यह कदम भी उठाना पड़ेगा। किस्सा खुली किताब परीक्षा का।



परीक्षा तो थी, फिर भी....

पाठ्यपुस्तकें मध्यप्रदेश सरकार की अनुमति से आठ स्कूलों में प्रयोग के तौर पर पढ़ाई जा रही हैं।

इसके बाद बच्चों का मूल्यांकन करने की प्रणाली को बदला गया। क्योंकि किताबें बदली जाएं और परीक्षा का तरीका न बदले तो सब किए कराए पर पानी फिर जाता है। इसलिए बच्चों की सोच-समझ और अभिव्यक्ति को जांचने वाले प्रश्न बनाने की कोशिश हुई और अहम् निर्णय लिया गया कि परीक्षा में छात्र पाठ्यपुस्तक का उपयोग कर सकते हैं, यानी परीक्षा खुली किताब वाली होगी।

यह निर्णय लिया तो बड़ी उधेड़बुन के बाद गया था। माध्यमिक शाला के स्तर पर खुली किताब वाली परीक्षा और वो भी फिर सामाजिक अध्ययन में - डर लग रहा था कि पता नहीं इस परीक्षा को लोग स्वीकार करेंगे या नहीं? अलग ढंग के नए-नए प्रश्न कैसे बनाएंगे, बच्चों के उत्तरों को अंक कैसे देंगे? आदि-आदि। पर दूसरी ओर मामला बिल्कुल साफ था। रटने, रटवाने की प्रवृत्ति पर रोक लगानी है तो पुस्तक तो देनी ही पड़ेगी। इस प्रयास को पूरा करने में कई अड़चनें आईं, कई बातें सीखीं, कई बातें सोचनी पड़ीं। इन सबके बारे में कभी बाद में। अभी इस खुली किताब वाली परीक्षा की कुछ झलकियां।

वे पन्ने पलटते रह गए

पहले तो बच्चों को लगा कि परीक्षा में पुस्तक होगी तो घर पर कुछ तैयारी करने की ज़रूरत ही नहीं है। सो वो बगैर पढ़े ही परीक्षा देने आ गए। पर जब प्रश्न-पत्र पढ़कर पुस्तक में से उत्तर निकालने की कोशिश शुरू की तो उनकी सिट्टी-पिट्टी गुम हो गई। वे पन्ने पलटते रहे, पलटते रहे - और उन्हें उत्तर ढूंढने में बहुत दिक्कत हुई। बहुत समय लगा। वे प्रश्न-पत्र अधूरा ही छोड़ कर उठ गए।

तब, बच्चों को समझ में आया कि पास में पुस्तक खुली होने से समस्या हल नहीं हो जाती। पाठ पढ़ना, समझना, तैयारी की मेहनत करना अब भी ज़रूरी है।

हमें भी कुछ महत्वपूर्ण बातों का अहसास हुआ। बच्चों को कई उत्तर पता थे फिर भी वे पन्ने पलट रहे थे कि किताब में देख कर ही लिखेंगे। उन्हें यह समझाने का तरीका ढूंढना ज़रूरी था कि पुस्तक का उपयोग तभी करें, जब कुछ पता न हो, या किसी चीज़ के बारे में संशय हो। पहली कोशिश अपनी समझ से, अपने शब्दों में उत्तर देने की ही होनी चाहिए। हर प्रश्न को पुस्तक में देखकर उत्तर देने से फिजूल समय

ही खराब होता है। तब हमने यह नीति बनाई व बच्चों के बीच इसका प्रचार भी किया कि अपने शब्दों में लिखे उत्तरों को एक अंक ज़्यादा दिया जाएगा।

उपशीर्षकों की भूमिका

दूसरी बात जिसका हमें तीव्रता से अहसास हुआ वह यह थी कि पुस्तक में जानकारी ढूंढने के तरीके बच्चों को स्पष्ट रूप से सिखाने पड़ेंगे। तब हमने कोशिश की कि हर पाठ में अधिक संख्या में सटीक उपशीर्षक डाले जाएं। साथ ही पाठ के अंत में दिए जाने वाले अभ्यास के प्रश्नों में उपशीर्षकों के उपयोग से संबंधित प्रश्न खासतौर से डाले गए। शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रमों में शिक्षकों को भी उपशीर्षकों के उपयोग के प्रति सचेत किया गया।

सवाल पाठों की हैसियत का भी

इस पूरे अनुभव से सीखने का सिलसिला और बहुत आगे तक गया। जब हमने बच्चों के उत्तर जांचे और उनका विश्लेषण किया तो विभिन्न प्रश्नों का बड़ा ही अलग-अलग हश्र सामने आया। ऐसा कि जो हमारी सोच तक से बाहर था। उदाहरण के लिए यहां दो प्रश्नों के उत्तरों को देखते हैं:

एक प्रश्न था 'मुगल काल के गांव' नामक पाठ से कि *'गांवों के ज़मींदार मुगल अमीरों की क्या मदद करते थे?'* इस प्रश्न का सीधा उत्तर पाठ में कहीं एक जगह लिखा हुआ नहीं है। पाठ में एक मुगल गांव की कहानी है जिसकी घटनाओं और पात्रों के द्वारा मुगलकालीन व्यवस्था का चित्रण किया गया है।

इसका मतलब यह था कि छात्र पाठ के किसी एक अंश की नकल उतार कर नहीं लिख सकते थे और उन्होंने ऐसा किया भी नहीं। फिर भी यह प्रश्न बच्चों के लिए मुश्किल साबित नहीं हुआ। 50 में से 35 बच्चों ने संतोषजनक जवाब लिखे। उत्तर बिल्कुल न लिखने वाले सिर्फ सात बच्चे थे।

जब हमने मिलकर इन बातों का विश्लेषण किया तो यह बात समझ में आई कि ज़मींदार की गांव में जो भूमिका थी वह पाठ में कई घटनाओं के द्वारा बार-बार सजीव, रोचक व ठोस रूप से उभर कर आई थी। अतः बच्चों के मन में ज़मींदार की भूमिका की एक स्पष्ट व ठोस छवि बन गई थी और वे अपने मन में उतरी छवि और समझ के आधार पर प्रश्न का उत्तर दे पाए। इस प्रश्न के माध्यम से हम यह मूल्यांकन कर पाए कि बच्चों ने पाठ में बिखरी हुई जानकारी कैसे अपनी समझ के सहारे निकाली और अपने शब्दों में लिखी।

प्रश्नः गांव का ज़मींदार मुगल अमीरों की क्या मदद करता था?

विद्यार्थियों के उत्तरों के कुछ उदाहरण....

1. गांव के ज़मींदार मुगल अमीरों की लगान वसूल करने में मदद करते थे। और किसी किसान को गांव से भागने नहीं देते थे। उन्हें रोका जाता था। गांव में नए किसानों को बसाने के लिए पूरी छूट देते थे। ताकि वह ज़मीन जोतें। और लगान पूरा भरा जा सके।

2. गांव के ज़मींदार मुगल अमीरों की लगान वसूल करने में मदद करते थे। तथा किसानों को दबा धमका कर लगान इकट्ठा करते थे।

3. गांव के ज़मींदार मुगल अमीरों की मदद कर में करते थे। गांव गांव से कर इकट्ठा करते थे और सब हिसाब अपने पास रखते थे और बाद में कर का पूरा पैसा मुगल अमीरों को दे देते थे।

4. गांव के ज़मींदार मुगल अमीलों को किसानों से लगान इकट्ठी कर के देते थे। और आमिल वह लगान मुगल अमीरों को देता था। इस प्रकार गांव के ज़मींदार मुगल अमीरों की मदद करते थे।

यह पाठ छोटा-सा

अब आइए एक दूसरे प्रश्न के उदाहरण पर। यह ज़मींदार वाले प्रश्न से एक बिल्कुल अलग स्थिति प्रस्तुत करता है। प्रश्न था इतिहास के ही एक-दूसरे पाठ 'अंग्रज़ों के शासन में जंगल और आदिवासी' से।

प्रश्न: बाहर के लोग वन की ज़मीन पर लगान आसानी से क्यों चुका पाते थे?

पाठ के एक अंश में यह बताया गया है कि आदिवासी लोग अपनी ज़मीनों पर अंग्रेज़ों द्वारा मांगा लगान कई बार नहीं चुका पाते थे, जबकि बाहर के लोग (सेठ, साहूकार, ज़मींदार) वन की ज़मीन पर अधिकार करके लगान चुका पाते थे क्योंकि वे लकड़ी काट कर उसका व्यापार करते थे। उन दिनों लकड़ी की मांग बहुत बढ़ गई थी।

अचरज की बात यह है कि इस प्रश्न का उत्तर एक सटीक पैराग्राफ में इस छोटे से पाठ में लगभग शुरू में ही लिखा हुआ है। उम्मीद तो यह की जानी चाहिए थी कि अधिकांश बच्चे इस पैराग्राफ की नकल उतार कर लिख देंगे और प्रश्न को सही-सही हल कर देंगे। पर 50 में से 32 बच्चे इस सटीक पैराग्राफ को नहीं ढूंढ पाए। पैराग्राफ की नकल उतारी 11 बच्चों ने, 7 बच्चों ने इस अंश की बातें अपने शब्दों में लिखीं। यानी कुल 18 उत्तर ठीक थे। अब बताइए हम क्या सोचें?

प्रश्नः बाहर के लोग बन की ज़मीन पर लगान, आसानी से क्यों चुका पाते थे?

विद्यार्थियों के उत्तरों के कुछ उदाहरण....

1. मगर खेती करने को आदिवासी किसान इस तरह लकड़ी नहीं बेचते थे। वे सरकार को लगान समय पर नहीं चुकाना पाते लगान नहीं चुकायी तो जमीन नीलाम हो जाती नीलामी से बचने के लिए आदिवासी सेठ साहूकारों से कर्जा लेते थे। आदिवासियों की जमीन नीलाम करवा कर खरीद ली। अब आदिवासी साहूकारों के बटाईदार . . .

(यह अंश पाठ में सही अंश के ठीक बाद आता है)

2. स्वतंत्रता के बाद भारत में बेगार करवाना तो गैर कानूनी हो गया पर जंगल के उपयोग को लेकर वही पुरानी समस्याएं बनी हुई हैं। स्वतंत्रता के बाद भारत की सरकार ने वनों आरक्षित करने और लोगों द्वारा वन पर (इ)स्तमाल रोक लगाने की नीति कमयाब (कायम) रही। गांव के लोग को वनों का इस्तमाल करते थे। और इनमें उपयोगी चिज (चीज़) बेच कर लगान आसणि (आसानी) से देते थे।

(पहली सात पंक्तियां पाठ के अंत से ली गई हैं। फिर कुछ अपने आप जोड़ा गया है।)

3. क्योंकि जमीन पर अनाज बहुत होता उसे बेच कर जमीन की लगान दे देते थे और उन्हें देना अखरता नहीं था

(अपना अनुमान लगाते हुए लिखा गया है)

पाठों की तुलना

50 में से 32 छात्र क्यों नहीं ढूंढ पाए इस प्रश्न का उत्तर? पुस्तक सामने होते हुए भी।

चलिए ज़रा पाठ के स्वरूप को जानें। यह पाठ 'मुगल काल के गांव' से बिल्कुल अलग था। इसमें न कहानी थी, न किस्से, न पात्र, न घटनाएं। पाठ में कई जटिल प्रक्रियाएं संक्षेप में, तेज़ी से व एक बार में ही बताई गईं थीं।

ठोस, सजीव कहानीनुमा वर्णन जिसमें मुख्य बातों की कई बार पुनरावृत्ति हो जाती है - यह तकनीक इस पाठ के लिखने में नहीं अज़माई गई थी।

इसीलिए शायद बाहर के लोगों की गतिविधियों की छवि बच्चों के मन में नहीं बन पाई थी और वे इस प्रश्न का उत्तर ठीक से नहीं दे पाए। इस तरह मज़ेदार बात यह रही कि बच्चों की

मुगल काल के गांव...एक अंश

ज़मींदार सूरजदेव जाट ने पटवारी और पटेल को बुलाया और उनसे लगान इकट्ठा करने को कहा।

पटवारी बोला, "अगर कोई देने से इंकार कर दे तो?"

ज़मींदार बोला, "मेरे दो घुड़सवार और चार सिपाही आपके साथ चलेंगे - देखते हैं किस की हिम्मत है मना करने की।"

लगान इकट्ठा करने में तीन-चार दिन लग गए। कुछ किसानों के खेत में ओले पड़े थे तो उनसे लगान नहीं मिल सका।

जब जागीरदार का आमिल लौट कर आया तो ज़मींदार सूरजदेव ने उसे हिसाब समेत इकट्ठी लगान की रकम थमा दी। आमिल ने पूछा कि पैसे पूरे क्यों नहीं हैं।.....

अंग्रेज़ी शासन में वनों का उपयोग...एक अंश



...अब बाहर के सेठ, साहूकार व ज़मींदार आकर जंगल की ज़मीन अपने नाम से दर्ज कराने लगे। जंगल पर उनका हक होने लगा। मगर उन्हें जंगल से क्या लाभ मिला?

उन दिनों लकड़ी की खूब मांग बढ़ रही थी। रेल के स्लीपरों के लिए,



जहाज़ों के लिए, शहर में बन रही कोठियों, दफ्तरों, घरों के लिए। सेठ, साहूकारों ने जंगल की ज़मीन लेकर लकड़ी दनादन काटी व बेच कर मालामाल हो गए। इस धन से वे सरकार का लगान आसानी से चुका पाए।

मगर खेती करने वाले आदिवासी, किसान इस तरह लकड़ी नहीं बेचते थे। वे सरकार का लगान समय पर नहीं चुका पाते थे। लगान नहीं चुकाई तो ज़मीन नीलाम हो जाती। नीलामी से बचने के लिए आदिवासी सेठ, साहूकारों से कर्ज़ा लेने लगे।......

(यह पाठ नए संस्करण में बदला जा चुका है)

क्षमता के साथ-साथ हम पाठों की क्षमता का मूल्यांकन भी करने लगे।

नकल और अक्ल

दूसरी बात जो स्पष्टतः कही जा सकती है वह यह कि किताब से उत्तर निकाल पाना (वो भी परीक्षा के एक निश्चित समय के अंदर) एक अच्छी खासी कुशलता जान पड़ती है। इसमें कई छोटी-छोटी कुशलताएं शामिल हैं - जैसे ध्यान से पढ़ना, विषय व प्रश्न के संदर्भ को समझना, पाठ के शीर्षक व उपशीर्षकों को उपयोग में लाना और सबसे बढ़कर तो धीरज रखना। पुस्तक हाथ में होने से परीक्षा में बच्चों के लिए करने को कुछ नहीं रहता - यह कहने से पहले लोगों को दुबारा सोच लेना चाहिए।

उपरोक्त दोनो प्रश्नों में ही देखें तो कई बच्चों ने पुस्तक के अंश को नकल करके लिखा था। इससे सहज ही हमारे मन में बड़ी दुविधा पैदा होती है। नकल को क्यों अच्छे नंबर दिए जाएं? हम सोचने लगते हैं उसने कुछ भी तो नहीं किया। सिर्फ नकल करके लिखा है - फिर अंक क्यों?

हमने इस मुद्दे पर बहुत मन टटोला। सोचा कि जब हम पुस्तक उपलब्ध करवा रहे हैं तो बच्चों द्वारा पुस्तक के अंश उतारकर लिखने की कोशिश स्वाभाविक है। इसे गौण क्यों मानें? अगर यह क्षमता इतनी सरल है तो सारे विद्यार्थी नकल क्यों नहीं कर पाए? फिर 'नकल' में भी बच्चों की क्षमता के विभिन्न स्तर दिखाई पड़ते हैं। कुछ बच्चों ने सटीक, स्पष्ट अंश पाठ में से उतारे हैं। कुछ ने उचित पाठ्यांश में से अधूरी व अस्पष्ट बात ही उतारी है। कुछ ने उचित अंश उतारने के साथ-साथ आगे या पीछे के असंगत वाक्य भी उतार डाले हैं।

हम तो यही निष्कर्ष पर पहुंचे कि नकल वाले उत्तरों में भी बच्चों की क्षमता का मूल्यांकन करने की बहुत गुंजाइश है। समझदारी के साथ पढ़ने व लिखने की क्षमता एकदम आधारभूत क्षमता है। अगर हमने अपने विद्यार्थियों को इसमें दक्ष नहीं किया और मूल्यांकन करके यह सुनिश्चित नहीं किया कि हमारे माध्यमिक शाला से उत्तीर्ण छात्र समझदारी के साथ पढ़ व लिख पाते हैं तो फिर हमने स्कूल लगाकर आखिर क्या किया?

आपको सामाजिक अध्ययन शिक्षा में खुली किताब परीक्षा के बारे में क्या लगता है? अपने विचार हमें लिखें। वैसे सामान्य सामाजिक अध्ययन की परीक्षा के बारे में आपका क्या कहना है? हम चाहेंगे कि परीक्षा पर इस बातचीत को जारी रखें ताकि मूल्यांकन के शैक्षिक उद्देश्यों को उभारा जा सके।

सामाजिक अध्ययन कार्यक्रम, एकलव्य